Volume: 3 Issue: 4 Pages: 48-51

श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरणीय चेतना

[*1] डॉ0 बीरेन्द्र मणि त्रिपाठी

[*1] सह-आचार्य, अरविन्द कुमार (शोध छात्र), ने0ग्रा0भा0मा0वि0वि0, प्रयागराज, उतार प्रदेश, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 5.231
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 20/March/2024
Accepted: 28/April/2024

***Corresponding Author**
डॉ0 बीरेन्द्र मणि त्रिपाठी
सह-आचार्य, अरविन्द कुमार (शोध छात्र), ने0ग्रा0भा0मा0वि0वि0, प्रयागराज, उतार प्रदेश, भारत।

सारांश:
श्रीमद्भगवद्गीता में मानव जीवन के कल्याण हेतु अनेक ज्ञानात्मक तत्व विद्मान है। इसमें निहित मानव तथा उसके पर्यावरण के साथ संबंधों के विषय में तथा पर्यावरणीय चेतना से युक्त और उसमें वृद्धि करने वाले मार्गदर्शन से प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरण के लिए हितकारी ज्ञान का उल्लेख है। श्रीमद्भगवद्गीता से पर्यावरण तथा मानव के मध्य सकारात्मक अन्तःक्रिया का ज्ञान प्राप्त होता है। श्रीमद्भगवद्गीता से जीवों के प्रति सद्भावना रखने की प्रेरणा मिलती है। श्रीमद्भगवद्गीता से प्राप्त ज्ञान से विश्व कल्याण की शिक्षा और मार्गदर्शन प्राप्त होता है। वर्तमान में श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित पर्यावरणीय चेतना की प्रासंगिकता बनी हुई है। श्रीमद्भगवद्गीता मानव कल्याण हेतु मार्गदर्शन प्रदान करने वाला एक श्रेष्ठ ग्रन्थ है। मानव का कल्याण उसके पर्यावरण से अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ विषय है जिससे सम्बन्धित तत्व हमें श्रीमद्भगवद्गीता में भी प्राप्त होते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरण के महत्व को स्पष्ट करते हुए कई श्लोक प्राप्त होते हैं और विभिन्न जीव जन्तुओं के प्रति सद्भाव की प्रेरणा भी प्राप्त होती है मानव तथा उसके पर्यावरण के मध्य स्थापित सम्बन्धों को देखने का एक नवीन दृष्टिकोण भी हमें श्रीमद्भगवद्गीता में मिलता है। मानव को अपने परिवेश से अनेक ज्ञानवर्धक प्रत्यय प्राप्त होते हैं जिसमें समस्त सृष्टि के कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञानात्मक, भावनात्मक, क्रियात्मक पक्ष भी समाहित हैं। मानव के इन्ही ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक पक्षों सही मार्गदर्शन प्रदान करने, उसे समस्त विश्व के कल्याण से जोड़ने का प्रयास श्रीमद्भगवद्गीता में प्राप्त होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में संसार के रक्षा हेतु 'कर्म' पर बल देने के साथ–साथ सृष्टि की रक्षा पर भी बल दिया गया है।

मुख्य शब्द: चेतना, पर्यावरण, सृष्टि, प्रत्यय, समभाव

प्रस्तावना:

भारत एक पर्यावरणीय दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र है। प्राचीन काल से ही इस विषय में सजग करने वाली चेतना भारतीय संस्कृति में विद्यमान रही है जिसका उल्लेख प्राचीन भारतीय साहित्य में अंतर्निहित रहा है। इसी संदर्भ में श्रीमद्भगवद्गीता में भी प्रेरक वर्णनों का वर्तमान विश्व के पर्यावरणीय समस्यओं के समाधान हेतु अध्ययन किया जा सकता है जो समसामायिक वैश्विक परिस्थितियों में भी प्रासंगिक बना हुआ है।

श्रीमद्भगवद्गीता प्राचीन भारतीय महाकाव्य महाभारत के 'भीष्म पर्व' का अंग है। जिसमें भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा मानव कल्याण हेतु दिव्य एवं अध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ व्यवहारिक जगत में उपयोगी कर्म प्रधान, ज्ञान पर बल दिया गया है।

मानव प्रारम्भ से जिन वातावरणीय जैविक, अजैविक घटकों के अंतक्रिया से उत्पन्न परिस्थितियों से घिरा रहता है उसे पर्यावरण कहते है। जिसके साथ मानव स्वयं भी अंतक्रिया करता है जो की इस पर्यावरणीय दशाओं से प्रभावित होने के साथ-साथ उसे प्रभावित भी करती है। मानव द्वारा पर्यावरण को जानने या समझने का प्रयास आरम्भ से ही किया जाता रहा है जिससे पर्यावरणीय दशाओं को उत्तम बनाने में सहयोग दिया जा सके। इसी उत्तम दशा की प्राप्ति हेतु जिस ज्ञान की आवश्यकता होती है जिसमें ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक तीनों पक्ष समाहित होते है, इसी को चेतना कहते है जो मानव तथा पर्यावरणीय अंतक्रिया का परिणाम है।

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय संस्कृति की अनमोल धरोहर है। भारतीय संस्कृति में जीवों के प्रति दया तथा प्रकृति पूजा के विभिन्न उदाहरण मिलते है। जिससे प्रकृति को संरक्षित करने के साथ-साथ उसमें आस्था को भी दर्शाने का प्रयास उसे सकारात्मक एवं सुसमायोजित अंर्तबोध से युक्त बनाता है। इसका उदाहरण श्रीमद्भगवद्गीता में मिलता है:-

सर्वभूतस्थमात्मान सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।

जैसा कि उपरोक्त श्लोक में वर्णित है कि जो वास्तविक योगी वह है सभी जीवों में ईश्वर को तथा ईश्वर में सभी जीवों को देखता है। श्रीमद्भगवद्गीता में कहे गये उपरोक्त श्लोक से जीवों के प्रति समान संवेदना की आवश्यकता पर बल देने के साथ-साथ उन्हें महत्वपूर्ण स्थान भी प्रदान करता है। जीवों में ईश्वर को देखने का विचार उन्हें संरक्षण देने और उनके प्रति सचेत होने के भाव को भी अंर्तमन में निर्मित करता है। जीवों में व्याप्त विशेषताएं उन्हें दिव्यता प्रदान करती है। जो कि पर्यावरणीय संतुलन का आवश्यक गुण है। पर्यावरण में निहित जीवों की महत्ता से परिचित कराने का महत्वपूर्ण कार्य इस श्लोक के माध्यम से स्वतः हो जाता है। इस श्लोक से आध्यात्मिक चेतना के साथ-साथ पर्यावरणीय चेतना की भी प्रेरणा प्राप्त होती है। श्रीमद्भगवद्गीता में ही उल्लेख मिलता है कि-

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमोमतः।।

उपरोक्त श्लोक में कहा गया है जो पूर्ण योगी होता है वह अपने समान ही अन्य जीवों के दुखों तथा सुखों को मानता है या उसे जीवों के दुखों और सुखों में अपने दुखों के और सुखों के समान ही अनुभव करता है। इस उल्लेख से भारतीय संस्कृति के जीवों के प्रति सद्भाव के संकल्प को प्रबल प्रेरणा मिलती है। जीव हमारे पर्यावरण के अनमोल अंश है जिनकी भूमिका खाद्य श्रृंखला से लेकर पर्यावरण संतुलन में भी है अगर हम इन जीवों के सुख-दुख को अपना मानकर उनके प्रति संवेदनशील रहेगें तो पर्यावरण के साथ सुसमायोजन बनाने में सहायता प्राप्त होगी। पूर्णयोगी प्रत्येक जीव के साथ मित्र की भांति व्यवहार करता है और वह प्रकृति को और प्रकृत उसको स्वीकार करती है जिससे प्रकृति तथा मानव में आदरयुक्त संबंध स्थापित होता है। पर्यावरण में भौतिक तथा जैविक दोनों तत्व विद्यमान है जिसके महत्व को समझाते हुये 'श्रीमद्भगवद्गीता' में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि:-

रसोऽध्मप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्द खे पौरूषं नृषु।।

इस श्लोक में उल्लेख है कि ईश्वर अर्थात् श्री कृष्ण स्वयं अर्जुन से कहते हैं कि- ''मैं जल का स्वाद, सूर्य और चद्रंमा का प्रकाश हूँ। वैदिक मंत्रों में ओंकार और नभ अर्थात अकाश में ध्वनि हूँ और मनुष्यों में उनका सामथ्र्य हूँ।'' अगर विस्तृत अर्थों में भाव को ग्रहण किया जाये तो जल की स्वच्छता बनाए रखने तथा उसके प्राकृतिक स्वाद बनाए रखने की प्रेरणा मिलती है क्योंकि जल ही जीवन है। जीवन की रक्षा हेतु स्वचछ जल आवश्यक है। इस प्रकार से वर्तमान समय में प्रकाश से संबंधित प्रदूषण भी चर्चा का विषय रह चुका है जिसमें चकाचैध के कारण सामान्य प्राकृतिक अवस्था में बाधा उत्पन्न होती है। जिससे जीव जंतुओं सहित मानव स्वभाव में भी परिवर्तन आया है। ओंकार की ध्वनि का महत्व यह है कि जो मानव के मांसिक शांति प्रदान करने में सहायक रही है। ईश्वर ने अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष रूप से अपनी उपस्थिति उन तत्वों में बताया है जो मानव जीवन को उत्तम बनाते है इसका एक उद्देश्य यह भी है की मानव इन तत्वों की गुणवत्ता बनाये रखे और इनके प्रति सद्भाव युक्त चेतना का विकास अपने मन में करें। मनुष्य पर्यावरण के साथ सुसमायोजन विकसित कर सकता है, इसके लिए जो क्षमता और सामथ्र्य उसे चाहिए उसमें ईश्वर ने स्वयं को व्याप्त बताया है। ईश्वर सद्भाव से युक्त उस सामर्थ में विद्यमान है जो पर्यावरण को संवर्धन हेतु आवश्यक होता है। इस क्रम में आगे श्रीमद्भगवद्गीता में उल्लेख आया है कि-

पुण्यो गन्धः पृथिव्या च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषू तपश्चास्मि तपस्विषु।।

अर्थात ईश्वर ने स्वयं को पृथ्वी की आध सुधंध बताया है और अग्नि की उष्मा बताया है। समस्त जीवों के जीवन के रूप में स्वयं को बताया है तथा समस्त तपस्वियों के तप में स्वयं को दर्शाया है। अर्थात् ईश्वर तपस्वियों का तप है। इस वर्णन से स्पष्ट है कि ईश्वर ने जीवों के कल्याण हेतु उनको अपना अनमोल उपहार जीवन दिया है। जिसमें वे स्वयं व्याप्त है। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है की जीवों को महत्व को समझना चाहिए और उनके अस्तित्व के होने से मनुष्य का अस्तित्व होने की संभावना अधिक समृद्ध होती है। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के प्रत्येक जीव के महत्व को समझ कर उसको अपने जीवन में विशेष स्थान प्रदान करने का जो प्रयास किया गया उसमें प्रत्येक जीव के प्रति कल्याणकारी दृष्टिकोण है। वर्तमान समय में जब पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या में वृद्धि से मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ रहा है और मानव जीवन के इस आपाधापी में पर्यावरण के विनाश को अन्देखा करा रहा है। ऐसे समय में श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित कई श्लोक हमारे पर्यावरणीय चेतना को विकसित कर हमें पर्यावरण के महत्व से परिचित कराने में सक्षम है। श्रीमद्भगवद्गीता में उल्लेख मिलता है-

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमदिश्च मध्यं च भूतानमन्त एव च।।

उपरोक्त श्लोक में श्री कृष्ण कहते है कि हे अर्जुन! मैं सभी जीवों के हृदय में रहने वाला परमात्मा हूँ और मैं सभी जीवों का आदि, मध्य तथा अंत हूँ। उपरोक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि ईश्वर सभी जीवों के हृदय में वास करने का जो संदेश दे रहे हैं उससे वह जीवों की दुखों से रक्षा करना चाहते है क्योंकि जीवों को दुःख देना अर्थात उनके हृदय को दुःखमय करना है। जिससे ईश्वर कभी भी प्रसन्न नहीं हो सकते। अतः जीवों की रक्षा करना ही उत्तम कर्तव्य है। जिससें जीवों के हृदय में हर्ष ओर प्रसन्नता का भाव भी उत्पन्न होता है, जो ईश्वर को भी प्रसन्न करता है। जीव हमारे पर्यावरण के महत्वपूर्ण अंग है जो जैवमण्डल के विभिन्न अंतःक्रियाओ में भाग लेकर पर्यावरण को मानव जीवन के लिए समृद्ध बनाते है। जिसके महत्व से परिचित कराने का यह प्रयास श्रीमद्भगवद्गीता के उपरोक्त श्लोक में देखने को मिलता है। पर्यावरण के प्रति सद्भाव होना पर्यावरणीय चेतना के विस्तार का एक महत्वपूर्ण अंग है। जिस प्रकार मछली का अस्तित्व जल से सम्बन्धित है उसी प्रकार मानव का अस्तित्व उसके पर्यावरण से संबंधित है। प्रदूषित जल में मछली का जीवन संभव नहीं है उसी प्रकार प्रदूषित पर्यावरण में मानव का जीवन भी संभव नहीं है। विकास और लाभ प्राप्त करने की चाहत ने मानव को पर्यावरण के प्रति संवेदनहीन बनाने में योगदान दिया है यहाँ विचार योग्य तथ्य यह है कि जब जीवन की गुणवत्ता ही निम्नतम् स्तर की ओर अग्रसर हो रही हो वहाँ ऐसे खोखले विकास का क्या लाभ? पर्यावरण में आस्था उत्पन्न करने के विभिन्न प्रयास हमारे प्राचीन साहित्य में मिलते है जिसमें यह तथ्य उल्लिखित है कि पर्यावरण की उच्च गुणवत्ता मानव जीवन को उच्च गुणवत्तापूर्ण बनाने हेतु अनिवार्य है। प्रकृति में ईश्वर का वास है इस भाव के श्लोक हमें श्रीमद्भगवद्गीता में प्राप्त होते है जिसका एक उदाहरण निम्नलिखित है-

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धि र्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।।

उपरोक्त श्लोक में कहा गया है की मैं (श्रीकृष्ण) समस्त जीवों का आदि बीज हूँ, बुद्धिमानों की बुद्धि तथा समस्त तेजस्वी पुरूषों का तेज हूँ। अर्थात् ईश्वर समस्त जीवों मे है। इस प्रकार ईश्वर ने स्वयं को संसार के समस्त जीवों से संबंधित करके यह संदेश देने का प्रयास किया है की जीवों की रक्षा में ही ईश्वर की प्रसन्नता है जो हमारे अच्छे पर्यावरण में ही सम्भव है। अपने पर्यावरण की रक्षा हमारा कर्तव्य है और चूँकि यह सृष्टि ईश्वर द्वारा निर्मित है तो इसकी रक्षा से ईश्वर अवश्य प्रसन्न होगें। जिससे मानव कल्याण अवश्यसंभावी होगा। श्रीमद्भगवद्गीता में कई जटिल अध्यात्मिक विषयों को सरलता से प्रस्तुत करने के लिए पर्यावरण में व्याप्त जीव जंतुओं के क्रियाओं के उदाहरण प्रस्तुत किये गये है जो कि पर्यावरण से उनके सीखने और ग्रहण करने की सहज चेतना को दर्शाता है। इसका एक उदाहरण निम्नलिखित है:-

यदा संहरते चायं कूर्मोऽ›नीव सर्वशः।।
इन्द्रियाणीन्द्रि यार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।

उपरोक्त श्लोक की पंक्तियों में कहा गया है कि जिस प्रकार कछुवा अपने अंगों को सिकोड़कर अपने ही खोल के अंदर ले लेता है उसी प्रकार जो मानव अपने इन्द्रियों को इन्द्रिय विषयों में लिप्त होने से खींच लेता है वह पुरूष पूर्ण चेतना की स्थिति में दृढ़ता से युक्त अर्थात दृढ़तापूर्वक स्थिर रहता है। उपरोक्त उल्लेख के माध्यम से यह सिद्ध होता है कि भारतीय अध्यात्मिक चेतना से पर्यावरणीय चेतना का संबंध दृढ़ता पूर्वक स्थापित रहा है। जो कि मानव कल्याण में संवर्धन करने की क्षमता से युक्त है। जिसे वर्तमान समय के युवा पीढ़ी को अध्ययन करने हेतु प्रेरित किया जा सकता है। जिससे मानव कल्याण हेतु पर्यावरणीय रहस्य को समझकर समसमायिक समस्याओं के समाधान की तलाश की जा सके। हमारे पर्यावरण में उपस्थित सभी जीवों से कुछ न कुछ सीखा जा सकता है परन्तु ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि जब विचार सकारात्मक हो और मंशा जनकल्याण की हो तो उत्तम परिणाम प्राप्त होने की संभावना प्रबल रहेगी। श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरण में व्याप्त अजैविक तथा जैविक दोनों ही प्रकार के तत्वों से प्रेरणा ग्रहण करने वाली पर्यावरणीय चेतना विद्यमान है जिसके माध्यम से गूढ़ अध्यात्मिक रहस्यों को समझाने का प्रयास किया गया है। जिसमें समुद्र तथा नदियों के माध्यम से भी प्रेरक प्रस्तुतीकरण किया गया है जिसका उदाहरण हमें निम्नलिखित रूप में मिलता है:-

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।।

उपरोक्त श्लोक में कहा गया है कि जो पुरूष सागर में लगातार प्रवेश करती रहने वाली नदियों की तरह इच्छाओं के निरंतर प्रवाह से अविचलित रहता है तथा जो हमेसा स्थिर बना रहता है। वहीं शांति प्राप्त कर सकता है। वह शांति नहीं प्राप्त कर सकता जो ऐसी इच्छाओं को तुष्ट करने की चेष्टा करता ही रहता है। उपरोक्त श्लोक में जहाँ एक ओर मन को स्थिर रखने की शिक्षा देने हेतु नदी तथा समुद्र का उदाहरण दिया गया है वहीं इस श्लोक में आज के भौतिकवादी युग में जहाँ निरंतर इंद्रिय सुखों की तालश में मानव ने अपने सुख चयन को खो दिया है उसे मानसिक शांति प्राप्ति हेतु मार्गदर्शन प्राप्त हो सकता है। भौतिकवादी युग में इच्छाओं का निरंतर विस्तार हो रहा है जिसे प्राप्त करने हेतु पर्यावरण में व्याप्त संसाधनों का निरंतर दोहन हो रहा है जिसका परिणाम है पर्यावरण प्रदूषण इससे बचने हेतु अध्यात्मिक विकास और पर्यावरणीय चेतना को विकसित करने की प्रेरणा श्रीमद्भगवद्गीता के इस श्लोक में प्राप्त होती है। भौतिकवादी युग में बाजार में वस्तुएं है उसे खरीदने हेतु क्रेता भी है परन्तु विचार योग्य तथ्य यह है कि उस वस्तु के निर्माण से हमारे पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ा है? तथा अब अगर उस वस्तु का उपयोग कर लिया जाए तो उसका हमारे स्वास्थ्य और चरित्र पर क्या प्रभाव पड़ेगा? श्रेष्ठ इच्छाओं से श्रेष्ठ भविष्य का निर्माण होता है और श्रेष्ठ इच्छा पर्यावरण के साथ सुसमायोजित होती है जो की श्रेष्ठ अध्यात्मिक तथा पर्यावरणीय चेतना से ही सम्भव है। गीता एक श्रेष्ठ ज्ञान से युक्त ग्रंथ है जो हमें श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करने में सक्षम है।

श्रीमद्भगवद्गीता के रचना का उद्देश्य ही मानव कल्याण है। मानव के अच्छे स्वास्थ्य हेतु अच्छे भोजन की आवश्यकता होती है जो कि हमारे पर्यावरण से ही हमें प्राप्त होता है। गीता में अच्छे भोजन के विषय में उल्लेख आया है कि –

आयुः सत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धा स्थिरा हृदया आहाराः सात्विकप्रियाः।।

उपरोक्त श्लोक में अच्छे भोजन के गुण बताए गये है जो सात्विक व्यक्तियों को प्रिय होता है, वह आयु वृद्धि करने वाला, जीवन को शुद्ध करने वाला, बल, स्वास्थ्य, तृप्ति प्रदान करने वाला होता है। इस प्रकार से हमें यह शिक्षा देने का प्रयास किया गया है कि भोजन का उद्देश्य हमारी वृद्धि तथा विकास में सहायता करना है। इसके चयन हेतु हमें हमारे पर्यावरण में व्याप्त भोजन योग्य सामग्री का चयन सर्तकता से करना चाहिए। जो कि हमारे पर्यावरणीय ज्ञान पर निर्भर है।

श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरणीय चेतना से युक्त अनेक शिक्षाएं प्राप्त की जा सकती है लेकिन समस्त जगत के कल्याण से युक्त पर्यावरणीय चेतना का भी वर्णन हमें गीता के श्लोकों में देखने को मिलता है जिसका उल्लेख निम्नलिखित है:-

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्विकम्।।

उपरोक्त श्लोक में कहा गया है कित जिस ज्ञान से अनंत रूपों में विभक्त सभी जीव में एक ही अविभक्त आध्यात्मिक प्रकृति देखी जाती है उसे ही तुम सात्विक जानों। अर्थात यहां यह भाव व्यक्त किया गया है कि जो व्यक्ति समस्त जीवों में एक ही आत्मा के दर्शन करता है उसी को सात्विक ज्ञान की प्राप्ति हुई है। यह पर्यावरणीय चेतना के सकारात्मक रूप का वर्णन है जिससे हमें सृष्टि को देखने की सात्विक दृष्टि प्राप्त होती है। सात्विक दृष्टि से सात्विक दर्शन का जन्म होता है जो कि संसार के कल्याण हेतु जीवों तथा मनुष्यों के मध्य सहजीविता के भाव से युक्त संबंधों का निर्माण करता है। संबंधों की मधुरता पर्यावरण को सुखमयी और मानवता को उन्नतशील बनाती है।

अतः हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि ‘‘श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता’’ जो कि भारतीय संस्कृति की एक अनमोल धरोहर है जिससे भारतीय समाज सहित विश्व को भी समय-समय पर विभिन्न विषयों में मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा है। इसमें पर्यावरणीय चेतना के मूल एवं विशेष तत्व समाहित है। गीता में उल्लिखित श्लोकों से हमें ज्ञात होता है कि भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं को प्रकृति के साथ सम्बन्धित बताने के साथ-साथ प्रत्येक जीव के अन्दर आत्मा रूप में भी व्याप्त बताया है। उपरोक्त उदाहरणों से सिद्ध है कि मानव चेतना में भी ईश्वर का वास होता है। पर्यावरण के लिए हितकारी चेतना का जो रूप हमें गीता के ज्ञान में निहित मिलता है उस ज्ञानात्मक प्रकाश से मानव के साथ-साथ समस्त जीवों का कल्याण भी सम्भव है। गीता में पर्यावरण के प्रति जो सजगता का भाव व्याप्त है और अध्यात्म से घनिष्ठ रूप से संबंधित है क्योंकि मानव का हित उसके पर्यावरण के हित से संबंधित है इसी कारण

पर्यावरण के हित से गीता के विभिन्न श्लोक संबंधित है। वस्तुतः गीता का ज्ञान विश्व कल्याण हेतु है। जिसका एक अंग पर्यावरण संवर्धन भी है अतः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि गीता पर्यावरणीय हित वर्धक ज्ञान से युक्त ऐसा ग्रंथ है जिसकी प्रासंगिकता भूत, वर्तमान में होने के साथ-साथ भविष्य काल में भी बनी रहेगी ऐसा अवश्यसंभावी है।

संदर्भ ग्रन्थ:

1. श्रीमद्भगवद्गीता 6/29
2. श्रीमद्भगवद्गीता 6/32
3. श्रीमद्भगवद्गीता 7/8
4. श्रीमद्भगवद्गीता 7/9
5. श्रीमद्भगवद्गीता 10/20
6. श्रीमद्भगवद्गीता 7/10
7. श्रीमद्भगवद्गीता 2/58
8. श्रीमद्भगवद्गीता 2/70
9. श्रीमद्भगवद्गीता 17/8
10. श्रीमद्भगवद्गीता 18/20